(IJASSH) 2020, Vol. No. 9, Jan-Jun e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722

धर्म और नैतिकता : गांधीजी के विचारों के संदर्भ में।

डॉ. सुधीर कुमार

महात्मा गांधी मूलतः नीति के प्रवक्ता और समाज के उद्धारक माने जाते हैं। नैतिकता उनका जीवन था और वे स्वयं धर्मपरायण थे। इसलिए उनकी समाज नीति या राजनीति भी नैतिकता और अध्यात्मिकता पर आधारित थी। गांधीजी ने कहा था कि वे राजनीति का अध्यात्मीकरण करने आये है। गांधीजी मनु और याज्ञवल्य की भांति स्मृतिकार तथा महात्मा बुद्ध और ईसा की तरह पैगम्बर थे, जिन्होंने कर्तव्य और अकर्तव्य धर्म और अधर्म के सम्बन्ध में अज्ञानी और दिग्भ्रान्त मानव को एक नयी रोशनी प्रदान की । इसलिए गांधी को युग पुरुष माना जाता है।

गाँधीजी ने अपनी रचनात्मक बुद्धि पूरब और पश्चिम के नैतिक विचारों के दिव्य अंशों का समन्वय किया और हिन्दू धर्म पर आधारित नीतिधर्म को नए परिवेश में उसकी पुर्नव्याख्या प्रस्तुत कर उसके वैज्ञानिक मानवतावादी और वस्तुवादी रुप प्रस्तुत किया। अतः एक ओर रस्किन का 'अन टु दिस लास्ट', सिद्धांत का 'डिसओबिडिएन', बाइबिल का " समवन ऑन दी माउण्ट' तथा टालस्टाय का 'ब्रेड लेबरे ने उन्हें प्रभावित किया तो दूसरी ओर हिन्दु संस्कृति की आध्यात्मिक परम्परा, अंहिसा का विशाल वाँग्डमय और गीता का निष्काम कर्म-योग से उन्हें प्ररेणा मिली। कार्ल मार्क्स के साधन साध्य के द्वैत और शुभ लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हिंसा या खूनी कांति की नीति उन्हें पसन्द नहीं आई तथा अपने अनुभव से इस पर चिंतन करना आरम्भ किया। इन सभी परिस्थितियों का लाभ उठाकर गाँधीजी ने सार्वभौम नैतिकता के सिद्धान्त की स्थापना की । धर्म और नीति के बीच बढ़ती हुई खाई का पाटकर उन्होंने नीति को धर्म का साधक और धर्म को नीति का आधार मानकर, इन दोनों में अद्भुत समन्चय किया। इस व्यापक समन्वय की नीति के फलस्वरुप जो नीति धर्म का रुप गांधी जी ने हमारे सामने रखा, उसे आत्मानुभव के लिए “सत्य की खोज” हिंसा से असम्भव और साधन-साध्य के निर्धारक नियत के रुप में प्रस्तुत किया है तथा उनके आध्यात्मिक शिष्य आचार्य विनोबा ने उसे

'साधन शुद्धि के विचार' अध्यात्मिक साधना और समाज सेवा का संगम तथा किसी साधना का सामूहिक अनुष्ठान के रूप में देखा है।

आमतौर पर नैतिकता प्रश्न तब उठता है जब हम ऐसे कर्मों का उल्लेख करते हैं जिनमें शुभ अथवा अशुभ होने का गुण पाया जाता है। ऐसे कर्म मानव के ऐच्छिक कर्म होते हैं। मूल प्रवृत्यात्मक या सहज कर्म जो कमोवश स्वचालित होते हैं। नैतिकता की परिधि से बाहर रहते है। नैतिक कर्मों के सम्बन्ध में गांधीजी के भी यही विचार हैं । उनके अनुसार जो भी धर्म ऐच्छिक नहीं होता है, उसे नैतिक नहीं कहा जा सकता है। उन्होंने स्पष्ट कहा है, "कोई भी धर्म जो ऐच्छिक नहीं थे वह नैतिक नहीं कहा जा सकता। जहां तक हम यंत्र की तरह कोई कार्य करते हैं, वहां नैतिकता अनैतिक कर्म सम्बन्धी उक्त मत के अनुसार वे कर्म भी नैतिक कर्मों की श्रेणी में आ जाती हैं जो अशुभ हुआ करते हैं क्योंकि वे भी ऐच्छिक होते हैं। यहाँ गांधी जी का विचार थोड़ा भिन्न हो जाता है। गांधीजी के अनुसार केवल शुभ कर्मों को ही नैतिक कर्म कहा जा सकता है। शैक्षणिक नैतिक दर्शनों में नैतिक का विपरीत नीतिशून्य होता है, लेकिन गांधीजी के दर्शन में "नैतिक का विपरीत" "अनैतिक" होता है । गाँधीजी के अनुसार शुभ का अर्थ है दूसरों के लिए शुभ अर्थात् उनके अनुसार जो कर्म दूसरों के लिए हितकर होता है वहीं शुभ है, कयोंकि दूसरों के शुभ में ही अपना शुभ निहित होता है।

नैतिकता की उपर्युक्त विवेचनों के पश्चात् अब हम यह देखेंगे कि गाँधीजी के अनुसार धर्म और नैतिकता के बीच कैसा सम्बन्ध है। सर्वप्रथम गांधीजी यह मानते हैं कि नैतिकता धर्म का आधार है। जिस आधार या नींव के हट जाने से पूरी इमारत जमीन पर गिर जाती हैं उसी प्रकार नैतिकता के नष्ट हो जाने से धर्म का नाश हो जाता है। इसे और स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि गाँधीजी के अनुसार धार्मिक लक्ष्य की प्राप्ति नैतिकता के मार्ग से ही हो सकती है।

जैसा उपर बतलाया गया, नैतिकता अहं का अतिक्रमण और दूसरों के प्रति प्रेम है।
उनका विश्वास है कि स्वार्थ का अतिक्रमण कर ही हम धार्मिक लक्ष्य यानी सत्य का साक्षात्कार कर सकते हैं। सत्य ईश्वर है अतः सत्य का साक्षात्कार ईश्वर का साक्षात्कार है। पुनः ईश्वर साक्षात्कार मानवता की सेवा है और मानवता की सेवा के लिए हम सभी तत्पर तभी होते है। जब उसके प्रति हमारे मन में प्रेम का भाव

(IJASSH) 2020, Vol. No. 9, Jan-Jun e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722

जगता है और प्रेम का भाव तभी जगता है। जब हम अहं का त्याग करते हैं और अपने स्वार्थ का अतिकमण करते हैं। गाँधीजी के प्रस्तुत विचार को व्यक्त करते हुए डी0एम0 दत्त ने स्पष्ट लिखा है "सच्ची आत्मा अर्थात ईश्वर के साक्षात्कार का मार्ग दूसरों के प्रति प्रेम का मार्ग है, प्रेम के लिए जिन कर्तव्यों को करना अपेक्षित होता है, उनके सम्पादन का मार्ग है। इस तरह नैतिकता धर्म का सार है। गाँधीजी ने भी स्वयं कहा है-"जैसे ही हम नैतिक आधार खो बैठते हैं, वैसे ही हम धार्मिक नहीं। रह जाते हैं । कोई भी धर्म नैतिकता का अतिक्रमण नहीं कर सकता। उदाहरण स्वरूप मनुष्य झूठा, कूर और असंयमी होकर ईश्वर को पाने का दावा कभी नहीं कर सकता।

बापू के विचार में सच्चा धर्म और सच्ची नैतिकता दोनों अविभाज्य रूप से एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। धर्म का नैतिकता के साथ वही सम्बन्ध है जो जल का जमीन में बोए गए बीज के साथ है। यहाँ गाँधीजी वस्तुतः यह कहना चाहते हैं कि नैतिकता का श्रोत धर्म है। पाश्चात्य दर्शन में भी इस तरह के विचार पाये जाते है। लॉक पेले आदि दार्शनिकों ने माना है कि नैतिकता का श्रोत धर्म है । उनके अनुसार नैतिकता ईश्वरीय नियम पर आश्रित होती है और भय एवं आशा के भाव नैतिकता को आधार प्रदान करते है। यदि मनुष्य को यह भय नहीं हो कि ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करने पर हमें दण्ड मिलेगा तो वह नैतिक होने की बात सोचेगा ही नहीं।

गाँधीजी का विचार उक्त पाश्चात्य विचारकों के मत से थोड़ा भिन्न है। गाँधीजी यह तो स्वीकार करते हैं कि नैतिकता का श्रोत धर्म है। परन्तु व्यक्ति नैतिकवान किसी बाह्य दबाव पर किसी भय के कारण नहीं होता, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के प्रति प्रेम को भावना के कारण जैसा कि पहले भी बतलाया गया, गाँधीजी के अनुसार धर्म का लक्ष्य सही अर्थ में आ मानवता की सेवा है और यदि सचमुच हमारे मन में यह भाव रहे कि हमारा लक्ष्य सम्पूर्ण मानवता की सेवा उसका कल्याण, उसका शुभ है तो हम सचमुच अपने अन्तर से यह महसूस करेंगे कि हमें सबों के प्रति प्रेम का भाव रखना चाहिए। यहाँ हम स्पष्ट देखते हैं कि अंतिम धार्मिक लक्ष्य की चेतना हमें नैतिक बनने की प्रेरणा देती है। इसीलिए गांधीजी ने कहा कि धर्म नैतिकता का श्रोत है। वह नैतिक भावना के उदय के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करता है। चूंकि बिना धर्म के नैतिक भावना अंकुरित नहीं हो सकती, इसलिए गांधीजी ने नैतिकता को बीज और धर्म को उसे सींचने वाला जल कहा।

(IJASSH) 2020, Vol. No. 9, Jan-Jun e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722

नैतिकता और धर्म के आधार तत्व :

नैतिकता और धर्म की समस्याओं को ती श्रेणियों में विभाजित किया गया है-

(क)- वस्तुगत नैतिकता

(ख)- आत्मगत नैतिकता और

(ग)- पारमार्थिक नैतिकता।

तीनों प्रकार के सिद्धान्तों के तीन आधार है। वस्तुगत नैतिकता का अध्ययन बाध्य नियम संहिताओं के आधार पर कर्मों के औचित्य अनौचित्य के निर्धारण की दृष्टि से की जाती है । आत्मगत नैतिकता का आधार मनोवैज्ञानिक है। इसमें मानव की आन्तरिक प्रवृतियों और निवृत्तियों के आधार पर किसी कार्य के औचित्य और अनौचित्य का निर्धारण होता है पारमार्थिक नैतिकता का अध्ययन मोक्ष और मोक्ष साधन के विचार से किया जाता है। गाँधी के नीति और धर्म सम्बन्धी विचारों को भी इन्हीं तीन व्यापक आधारों पर समझा जा सकता है।

वस्तुगत आधार - नैतिकता के वस्तुगत आधार के अन्तर्गत हम निम्नलिखित विषयों पर विचार करेंगे-

1. स्वधर्म विचार

2. वर्णाश्रम धर्म

3. सामान्य धर्म और व्रत विचार

4. सर्व धर्म समन्वय

5. सर्वोदय सिद्धान्त

इन्हें वस्तुगत नैतिकता के अन्तर्गत इसलिए रखा गया है कि इनका सम्बन्ध नैतिकता के स्थूल और सामाजिक पक्ष से है।

1. स्वधर्म विचार- गाँधीजी के नीतिशास्त्र में स्वधर्म की चर्चा हुई है। इस दृष्टि से नैतिक सिद्धान्तों में यह अपना विशिष्ट स्थान रखता है। नीतिशास्त्र की समस्या केवल उचित अनुचित कर्मों के विवेचन में ही समाप्त नहीं होती है। इसकी एक मुख्य समस्या है- व्यवहारिक जीवन में उचित अनुचित के भ्रम में पड़ने वाले नैतिक कर्ता का दिशा निर्देशन करना । कभी-कभी व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में आ जाता है, जब उसे उचित अनुचित स्पष्ट रुप से समझ में नहीं आता है। जब तक वह मानसिक संघर्ष की स्थिति बनी रहती है, तब तक उसे शांति नहीं मिलती और किसी कार्य की ओर वह प्रवृत नहीं होता । गाँधी जी के अनुसार वैसा काम नहीं करना चाहिए जो आशक्ति के बिना कभी उत्पन्न ही नहीं होता हो । जैसे हत्या, झूठ, व्यभिचार इत्यादि। परन्तु अनाशक्ति पूर्वक स्वधर्म का पालन ईश्वरी वृत्ति से करना चाहिए। स्वधर्म से शायद उनका अभिप्राय वर्णाश्रम धर्म के पालन अथवा योग्यता के अनुसार दिये गये दायित्वों का पालन है।

उनके अनुसार स्वधर्म के पालन के पीछे उपयोगिता की दृष्टि तो हैं ही इससे मोक्ष की भी सिद्धि होती है क्योंकि ईश्वर की दृष्टि में सभी कर्मों का मूल्य बराबर है। जो स्वधर्म का त्याग करता है वह नैतिक दृष्टि से गलत काम करता है। अतः नैतिक जीवन का प्रारम्भ ही स्वधर्म पालन से होता है।

विनोवा की राय में "स्वधर्म कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे बड़ा समझ कर ग्रहण करें और छोटा समझाकर छोड़ दें। वह न बड़ा होता है और न छोटा, वह अपने आपमें पूर्ण होता है।"

यहाँ एक प्रश्न उठता है- यदि स्वधर्म हमें निर्बाध प्राप्त ही है तो इसके करने और न करने का प्रश्न ही कहाँ उठता? और यदि इस कर्म को मनुष्य टाल नहीं सकता तो इच्छा स्वतंय के अभाव में उसे नैतिक अनैतिक कैसे ठहराया जा सकता है विनोबा यह मानते हैं कि स्वधर्म के पालन में मोह सबसे बड़ा बाधक तत्व है। अतः मोह को रखने और त्याग करने की स्वतंत्रता मनुष्य को प्राप्त व्यक्ति अपनी देहासक्त बुद्धि से उपर उठ सकता है । अतः स्वधर्म का पालन नीतिशून्य कर्म नहीं है। यद्यपि विनोबा के अनुसार यह नीतिधर्म से भिन्न है, फिर भी व्यापक अर्थ में यह नैतिक कर्म के अन्तर्गत आता है।

स्वधर्म के अन्तर्गत स्वदेशी, स्वजातीय और स्वकालीन धर्म सभी आ जाते है। विनोबा के अनुसार मनुष्य को हर भौगोलिक भूखण्डों में जीवन की सुरक्षा के लिए अलग-अलग ढंग से कार्य करना पड़ता है । शीत प्रदेशों में जीने के लिए मांसाहार और मदिरा आवश्यक है, यहाँ जीने के लिए प्रतिदिन स्नान करना आवश्यक नहीं।

(IJASSH) 2020, Vol. No. 9, Jan-Jun e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722

पर गर्म प्रदेशों में सात्विक आहार तथा नित्य स्नान आवश्यक है। इसी प्रकार अलग-अलग देशों के राजनीतिक और सामाजिक नियम अलग अलग होते हैं।

2. वर्णाश्रम धर्म- गाँधीजी नीतिधर्म के अन्तर्गत 'वर्णाश्रम धर्म' को भी लाते हैं ।वे सनातन हिन्दू धर्म के सही अर्थ में समर्थक हैं। गाँधीजी का दर्शन समग्र दर्शन है। अतः नैतिकता का निर्धारण का आधार का भी समग्र समाज होना चाहिए। वर्ण का आवश्यक परिणाम जाति है, जिसके आधार पर समाज के टुकड़े बनते हैं तथा ईर्ष्या और स्पर्धापूर्ण एकाकी समाज की स्थापना होती है। शायद ऐसा लगता है कि गाँधी ने हिन्दू गाँधी को अपनी पत्नी मानकर उसके विकटतम में कुछ सोचा ही नहीं है। किन्तु यह एक प्रकार की भावुकता और आशक्ति ही है इससे उनका परम्परावादी और कुछ दूर तक अप्रगतिवादी दृष्टिकोण ही सामने आता है विवेक और आधुनिकता को उचित स्थान नहीं मिल पाता है । परन्तु कभी-कभी गाँधी की उक्ति से लगता है कि वे किसी भी प्रकार के वर्ण धर्म में विश्वास नहीं करते हैं। जब अहमदाबाद की अदालत में उनसे उनकी पेशा के विषय में पूछा गया, तो उन्होंने कहा, "मैं जुलाहा हूँ और किसान हूँ। फिर भंगी का काम तो वे करते ही थे। राज्य सम्बन्धी नीति में भाग लेते ही थे। इससे लगता है कि वे सभी वर्ण के थे।

3. सामान्य धर्म और व्रत विचार- बापू के नीति धर्म के तहत आश्रम धर्म भी आता है । हिन्दू धर्म मानव जीवन को ब्रह्मचर्य गार्हस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास-चार आश्रमों में बाँटता है तथा प्रत्येक आश्रम के लिए अलग-अलग कर्तव्यों का विधान करता है । जीवन की प्रथम वर्ष ब्रहमचर्य धर्म का पालन उसके बाद के लगभग 20 वर्ष तक गार्हस्थ (गृहस्थ) धर्म का पालन, उसके बाद वानप्रस्थ धर्म का पालन एवं जीवन के सबसे अंतिम समय को सन्यास आश्रम धर्म का पालन करना बापू ने प्राचीन धर्म ग्रन्थों के आधार पर मनुष्य का नीति धर्म बतलाया है। जीवन के ब्रहमचर्य आश्रम में व्यक्ति का मुख्य धर्म या कर्तव्य अध्ययन और इंद्रिय संयम के द्वारा पवित्रतापूर्वक जीवन व्यतीत करना है। यह आध्यात्मिक दृष्टि से मुख्य अवस्था है, जिसमें प्रवेश के बिना कोई अन्य आश्रमों में प्रवेश नहीं कर सकता। ब्रहमचर्य आदि नियमों का पालन करने वाला गांधीजी के अनुसार सन्यासी है और यही सन्यास धर्म है। गाँधीजी ने नीति धर्म के अन्तर्गत अनिवार्य रूप से कुछ (ग्यारह) व्रतों का पालन करना मनुष्य के लिए आवश्यक माना है। सामान्य धर्म में कुछ शाश्वत और तात्कालिक दोनों प्रकार के धर्म आते हैं। इनका पालन सभी व्यक्ति के लिए बिना किसी वर्ण, जाति और आश्रम का विचार किए अनिवार्य माना जाता है । वास्तव में इन्हीं नैतिक मूल्यों के पालन और विकास पर

(IJASSH) 2020, Vol. No. 9, Jan-Jun e-ISSN: 2455-5150, p-ISSN: 2455-7722

सामाजिक जीवन का अस्तित्व निर्भर है। समाज का समुचित विकास स्वधर्म और सामान्य धर्म दोनों के पालन पर आधारित है। दर असल गाँधीजी केवल नैतिक नियमों और मूल्यों का विचार सैद्धान्तिक विवेचन के लिए ही नहीं करते हैं,बल्कि इन मूल्यों को वास्तविक रुप से जीवन में उतारने का विधान करते हैं। अतएव कुछ नैतिक मूल्यों का पालन व्रत के रुप में आवश्यक मानते हैं। गांधीजी के अनुसार व्रत, "किसी करने योग्य कार्य को किसीभी मूल्य पर करना है। अतः उनके अनुसार ग्यारह व्रतों सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, कायिक श्रम, अस्वाद स्वदेशी,अनिंदा, बल संयम का पालन नीति धर्म पर चलने वाले व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। बापू के विचार में इन एकादश व्रत के पालन का अर्थ सुविधा या अपनी शक्ति के अनुसार नहीं बल्कि जीवन के अंतिम परिणामों का भी सामना कर निश्चित रुप से इनका पालन करना। वे यह मानते हैं कि इन व्रतों का यदि कोई यथा संभव पालन की बात करता है तो इसका अर्थ है वह या तो अपने अहंकार या अपनी कमजोरी को धोखा देता है।

4. सर्वधर्म समन्वय- गाँधीजी ने मनुष्य के नीति धर्म के अन्तर्गत "सर्वधर्म सम्भाव" के विचार को भी रखा है। यद्यपि सभी धर्मों की समानता और उनके शुभ गुणों के समन्वय का विचार रामकृष्ण परमहंस तथा विवेकानन्द के विचारों में आया।

5. सर्वोदय सिद्धान्त- गाँधीजी का एक नैतिक आदर्श सर्वोदय' भी है । उन्होंने नैतिक आदर्श के रुप से सर्वोदय को स्वीकार किया है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार सुखवाद को सुख की प्राप्ति और आत्मपूर्णतावाद आत्मलाभ को नैतिकता का माप दंड मानता है। सर्वोदय विचार के तहत व्यक्ति " सभी का अच्छी तरह से उदय" चाहता है।सर्वोदय का परम धर्म पर आधारित महाभारत के नीति वचन सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया, सर्वे भद्राणि पश्यन्तु या कश्चित न दुःख भाग भवेत,में सर्वोदय का भाव ही छिपा है। ईशावत स्योपनिषद् के प्रथम श्लोक " ईशावास्यमिदम सर्व यत किंचित जगत्यांजगत । तेन त्यक्तेन झुंजीका मा गृधः कश्य श्विद् नम तथा गीता के आत्मवत् सर्वभूतेषु और सर्वभूत हिते रता" में सर्वोदय का ही नीतिवान भाव है। परन्तु स्पष्ट रुप से सर्वोदय का प्रयोग सर्वप्रथम जैना चार्य समन्त भद्र ने "सर्वोदयतीर्थ के रुप में किया था। इसी विचार को गांधीजी ने रस्किन की पुस्तक "अन दु दिस लास्ट" पुस्तक पढ़कर सर्वोदय का भाव प्रकट किया। गाँधीजी द्वारा व्यक्त सर्वोदय का विचार पूर्ण रुप से मानव के सर्वोच्च कर्म और नैतिकता पर आधारित है।

नैतिकता के वस्तुगत आधार को देखने से यह स्पष्ट है कि यहाँ नैतिकता का सम्बन्ध व्यक्तिगत दायित्वों सामाजिक नियमों और व्रतों तथा सामाजिक लक्ष्यों की सिद्धि से है और यही मनुष्य का परम धर्म भी है। इस प्रकार हम देखते हैं कि गाँधी-दर्शन में धर्म और नीति का अटूट सम्बन्ध स्थापित किया गया है। नीति धर्म और धर्म और नीति दोनों गाँधी विचार में सामानार्थक शब्द है।दोनों के अर्थ हैं- नैतिकता पर अश्रित धर्म। गाँधीजी का धर्म प्रचलित अर्थों में धर्म से भिन्न है। उनके विचार में धर्म आत्मगत साधना का विषय है। उनके विचार में नैतिकत का निवास निष्काम कर्म में है।

ग्रन्थसूची

1. यंग इंडिया -29.5. 1924 पृ0. 180.

"The diffirent religions are like partner in a quest for the same object."

2. डा0 राधाकृष्णनः ईस्ट एण्ड वेस्ट इन रिलीजन पृ0 26.

3. महात्मा गांधी, हरिजन 5.12.36 पृ0 339,345.

4. मेरा धर्म पृ. 25.

5. यंग इंडिया 22.11.1927 पृ0 425.

6. एन.के. बोस: सेलेक्सन फॉम गांधी, पृ0 254.

7. उपरिवत् पृ0 255.

8. एम0के0 गाँधी इथिकल रिलीजन पृ0-20.

"Morality is the besis of religion. In a foundation is removed the superstructure falls to the grounds, similarly if morality is destroyed, religion which is built on it comes crashing down."

9. डी0 एम0दत्ता, द फिलासॉफी ऑफ महात्मा गाँधी, यूनिवर्सिटी प्रेस 48. हगरा रोड बालयगंज,कोलकता, 21608- सितम्बर, 1968 पृ0 83.

10. यंग इंडिया, 24.11.21 पृ0 385.